CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नारद-भक्ति-सूत्र

सरल भाषानुवादसहित

कु० ऊर्मिला शर्मा

अनुवादक

हनुमानप्रसाद पोद्दार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
मुद्रक तथा प्रकाशक–घनश्यामदास जालान, गीताप्रेस, गोरखपुर

संवत् १९९२ से २००९ तक ९१,२५०
संवत् २०१० त्रयोदश संस्करण २०,०००
संवत् २०१३ चतुर्दश संस्करण १०,०००

कुल १,२१,२५०

मूल्य)। एक पैसा

पता–गीताप्रेस, पो० गीताप्रेस (गोरखपुर)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ॐ

नारद-भक्ति-सूत्र

सरल भाषानुवादसहित

अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

१—अब हम भक्तिकी व्याख्या करेंगे।

सा त्वस्मिन् परमप्रेमरूपा ॥ २ ॥

२—वह (भक्ति) ईश्वरके प्रति परम प्रेमरूपा है।

अमृतस्वरूपा च ॥ ३ ॥

३—और अमृतस्वरूपा (भी) है।

यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवति, अमृतो भवति, तृप्तो भवति ॥ ४ ॥

४—जिसको (परम प्रेमरूपा और अमृत-स्वरूपा भक्तिको) पाकर मनुष्य सिद्ध हो जाता है, अमर हो जाता है (और) तृप्त हो जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यत्प्राप्य न किञ्चिद्वाञ्छति न शोचति न द्वेष्टि न रमते नोत्साही भवति ॥ ५ ॥

५—जिसके (प्रेमस्वरूपा भक्तिके) प्राप्त होनेपर मनुष्य न किसी भी वस्तुकी इच्छा करता है, न शोक करता है, न द्वेष करता है, न किसी वस्तुमें आसक्त होता है और न उसे (विषय-भोगोंकी प्राप्तिमें) उत्साह होता है ।

यज्ज्ञात्वा मत्तो भवति स्तब्धो भवति आत्मारामो भवति ॥ ६ ॥

६—जिसको (परम प्रेमरूपा भक्तिको) जानकर ही मनुष्य उन्मत्त हो जाता है, स्तब्ध (शान्त) हो जाता है (और) आत्माराम बन जाता है ।

सा न कामयमाना निरोधरूपत्वात् ॥७॥

७—वह (प्रेमा भक्ति) कामनायुक्त नहीं है; क्योंकि वह निरोधस्वरूपा है ।

निरोधस्तु लोकवेदव्यापारन्यासः ॥८॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८—लौकिक और वैदिक (समस्त) कर्मोंके त्यागको निरोध कहते हैं ।

तस्मिन्ननन्यता तद्विरोधिषूदासीनता च ॥ ९ ॥

९—उस प्रियतम भगवान्‌में अनन्यता और उसके प्रतिकूल विषयमें उदासीनताको भी निरोध कहते हैं ।

अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता ॥ १० ॥

१०—(अपने प्रियतम भगवान्‌को छोड़कर) दूसरे आश्रयोंके त्यागका नाम अनन्यता है ।

लोके वेदेषु तदनुकूलाचरणं तद्विरोधिषूदासीनता ॥ ११ ॥

११—लौकिक और वैदिक कर्मोंमें भगवान्‌के अनुकूल कर्म करना ही उसके प्रतिकूल विषयोंमें उदासीनता है ।

भवतु निश्चयदार्ढ्यादूर्ध्वं शास्त्ररक्षणम् ॥ १२ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२—(विधि-निषेधसे अतीत अलौकिक प्रेम प्राप्त करनेका मनमें) दृढ़ निश्चय हो जानेके बाद भी शास्त्रकी रक्षा करनी चाहिये। अर्थात् भगवदनुकूल शास्त्रोक्त कर्म करने चाहिये।

अन्यथा पातित्याशङ्कया ॥ १३ ॥

१३—नहीं तो गिर जानेकी सम्भावना है।

लोकोऽपि तावदेव किन्तु भोजनादि-व्यापारस्त्वाशरीरधारणावधि ॥ १४ ॥

१४—लौकिक कर्मोंको भी तबतक (बाह्य-ज्ञान रहनेतक विधिपूर्वक करना चाहिये।) पर भोजनादि कार्य जबतक शरीर रहेगा तबतक होते रहेंगे।

तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामत-भेदात् ॥ १५ ॥

१५—अब नाना मतोंके अनुसार उस भक्तिके लक्षण कहते हैं।

पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्यः ॥ १६ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६—पराशरनन्दन श्रीव्यासजीके मतानुसार भगवान्‌की पूजा आदिमें अनुराग होना भक्ति है।

कथादिष्विति गर्गः ॥ १७ ॥

१७—श्रीगर्गाचार्यके मतसे भगवान्‌की कथा आदिमें अनुराग होना ही भक्ति है।

आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः ॥१८॥

१८—शाण्डिल्य ऋषिके मतमें आत्मरतिके अविरोधी विषयमें अनुराग होना ही भक्ति है।

नारदस्तु तदर्पिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति ॥ १९ ॥

१९—परन्तु देवर्षि नारदके (हमारे) मतमें अपने सब कर्मोंको भगवान्‌के अर्पण करना और भगवान्‌का थोड़ा-सा भी विस्मरण होनेमें परम व्याकुल होना ही भक्ति है।

अस्त्येवमेवम् ॥ २० ॥

२०—ठीक ऐसा ही है।

यथा व्रजगोपिकानाम् ॥ २१ ॥

२१—जैसे व्रजगोपियोंकी (भक्ति)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तत्रापि न माहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः ॥ २२ ॥

२२—इस अवस्थामें भी (गोपियोंमें) माहात्म्यज्ञानकी विस्मृतिका अपवाद नहीं ।

तद्विहीनं जाराणामिव ॥ २३ ॥

२३—उसके बिना (भगवान्‌को भगवान् जाने बिना किया जानेवाला ऐसा प्रेम) जारोंके (प्रेमके) समान है ।

नास्त्येव तस्मिंस्तत्सुखसुखित्वम् ॥२४॥

२४—उसमें (जारके प्रेममें) प्रियतमके सुखसे सुखी होना नहीं है ।

सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योऽप्यधिकतरा ॥ २५ ॥

२५—वह (प्रेमरूपा भक्ति) तो कर्म, ज्ञान और योगसे भी श्रेष्ठतर है ।

फलरूपत्वात् ॥ २६ ॥

२६—क्योंकि (वह भक्ति) फलरूपा है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद् दैन्यप्रियत्वाच्च ॥ २७ ॥

२७—ईश्वरका भी अभिमानसे द्वेषभाव है और दैन्यसे प्रियभाव है।

तस्या ज्ञानमेव साधनमित्येके ॥ २८ ॥

२८—उसका (भक्तिका) साधन ज्ञान ही है, किन्हीं (आचार्यों) का यह मत है।

अन्योन्याश्रयत्वमित्यन्ये ॥ २९ ॥

२९—दूसरे (आचार्यों) का मत है कि भक्ति और ज्ञान परस्पर एक दूसरेके आश्रित हैं।

स्वयं फलरूपतेति ब्रह्मकुमाराः* ॥ ३० ॥

३०—ब्रह्मकुमारोंके (सनत्कुमारादि और नारदके) मतसे भक्ति स्वयं फलरूपा है।

राजगृहभोजनादिषु तथैव दृष्टत्वात्॥ ३१॥

३१—राजगृह और भोजनादिमें ऐसा ही देखा जाता है।

---

* पाठभेद 'ब्रह्मकुमारः'।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

न तेन राजपरितोषः क्षुधाशान्तिर्वा॥३२॥

३२—न उससे (जान लेनेमात्रसे) राजाकी प्रसन्नता होगी, न क्षुधा मिटेगी।

तस्मात्सैव ग्राह्या मुमुक्षुभिः ॥ ३३ ॥

३३—अतएव (संसारके बन्धनसे) मुक्त होनेकी इच्छा रखनेवालोंको भक्ति ही ग्रहण करनी चाहिये।

तस्याः साधनानि गायन्त्याचार्याः॥३४॥

३४—आचार्यगण उस भक्तिके साधन बतलाते हैं।

तत्तु विषयत्यागात् सङ्गत्यागाच्च ॥३५॥

३५—वह (भक्ति-साधन) विषयत्याग और संगत्यागसे सम्पन्न होता है।

अव्यावृतभजनात् ॥ ३६ ॥

३६—अखण्ड भजनसे (भक्तिका साधन) सम्पन्न होता है।

लोकेऽपि भगवद्गुणश्रवणकीर्तनात्।३७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३७—लोकसमाजमें भी भगवद्गुण-श्रवण और कीर्तनसे (भक्ति-साधन सम्पन्न होता है)।

मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा

३८—परन्तु (प्रेमभक्तिकी प्राप्तिका साधन) मुख्यतया (प्रेमी) महापुरुषोंकी कृपासे अथवा भगवत्कृपाके लेशमात्रसे होता है।

महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च ॥३९॥

३९—परन्तु महापुरुषोंका सङ्ग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ है।

लभ्यतेऽपि तत्कृपयैव ॥ ४० ॥

४०—उस (भगवान्) की कृपासे ही (महापुरुषोंका) सङ्ग भी मिलता है।

तस्मिंस्तज्जने भेदाभावात् ॥ ४१ ॥

४१—क्योंकि भगवान्‌में और उनके भक्तमें भेदका अभाव है।

तदेव साध्यतां तदेव साध्यताम् ॥४२॥

४२—(अतएव) उस (महत्सङ्ग) की ही साधना करो, उसीकी साधना करो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दुःसङ्गः सर्वथैव त्याज्यः ॥ ४३ ॥

४३—दुःसङ्गका सर्वथा ही त्याग करना चाहिये।

कामक्रोधमोहस्मृतिभ्रंशबुद्धिनाशसर्व-नाशकारणत्वात् ॥ ४४ ॥

४४—क्योंकि वह (दुःसङ्ग) काम, क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश एवं सर्वनाशका कारण है।

तरङ्गायिता अपीमे सङ्गात्समुद्रा-यन्ति ॥ ४५ ॥

४५—ये (काम-क्रोधादि) पहले तरङ्गकी तरह (क्षुद्र आकारमें) आकर भी (दुःसङ्गसे विशाल) समुद्रका आकार धारण कर लेते हैं।

कस्तरति कस्तरति मायाम्? यः सङ्गांस्त्य-जति यो महानुभावं सेवते, निर्ममो भवति।४६।

४६—(प्रश्न) कौन तरता है? (दुस्तर) मायासे कौन तरता है? (उत्तर) जो सब सङ्गोंका परित्याग करता है, जो महानुभावोंकी सेवा करता है और जो ममतारहित होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यो विविक्तस्थानं सेवते, यो लोकबन्ध-मुन्मूलयति, निस्त्रैगुण्यो भवति, योगक्षेमं त्यजति ॥ ४७ ॥

४७—जो निर्जन-स्थानमें निवास करता है, जो लौकिक बन्धनोंको तोड़ डालता है, जो तीनों गुणोंसे परे हो जाता है और जो योग तथा क्षेम-का परित्याग कर देता है।

यः कर्मफलं त्यजति, कर्माणि संन्यस्यति, ततो निर्द्वन्द्वो भवति ॥ ४८ ॥

४८—जो कर्मफलका त्याग करता है, कर्मोंका भी त्याग करता है और तब सब कुछ त्याग कर जो निर्द्वन्द्व हो जाता है।

वेदानपि संन्यस्यति, केवलमविच्छिन्नानुरागं लभते ॥ ४९ ॥

४९—जो वेदोंका भी भलीभाँति परित्याग कर देता है और जो अखण्ड, असीम भगवत्प्रेम प्राप्त कर लेता है।

स तरति स तरति स लोकांस्तारयति।५०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५०—वह तरता है, वह तरता है, वह लोगोंको तार देता है।

अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् ॥ ५१ ॥

५१—प्रेमका स्वरूप अनिर्वचनीय है।

मूकास्वादनवत् ॥ ५२ ॥

५२—गूँगेके स्वादकी तरह।

प्रकाशते* क्वापि पात्रे ॥ ५३ ॥

५३—किसी बिरले योग्य पात्रमें (प्रेमी भक्तमें) ऐसा प्रेम प्रकट भी होता है।

गुणरहितंकामनारहितं प्रतिक्षणवर्धमान-मविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपम् ॥ ५४ ॥

५४—यह प्रेम गुणरहित है, कामनारहित है, प्रतिक्षण बढ़ता रहता है, विच्छेदरहित है, सूक्ष्मसे भी सूक्ष्मतर है और अनुभवरूप है।

---

*पाठभेद 'प्रकाश्यते'।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तत्प्राप्य तदेवावलोकयति तदेव शृणोति तदेव भाषयति* तदेव चिन्तयति ॥ ५५ ॥

५५—इस प्रेमको पाकर प्रेमी इस प्रेमको ही देखता है, प्रेमको ही सुनता है, प्रेमका ही वर्णन करता है और प्रेमका ही चिन्तन करता है।

गौणी त्रिधा गुणभेदादार्तादिभेदाद्वा।५६।

५६—गौणी भक्ति गुणभेदसे अथवा आर्तादि-भेदसे तीन प्रकारकी होती है।

उत्तरस्मादुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वा श्रेयाय भवति।५७।

५७—(उनमें) उत्तर-उत्तर क्रमसे पूर्व-पूर्व क्रमकी भक्ति कल्याणकारिणी होती है।

अन्यस्मात् सौलभ्यं भक्तौ ॥ ५८ ॥

५८—अन्य सबकी अपेक्षा भक्ति सुलभ है।

प्रमाणान्तरस्यानपेक्षत्वात् स्वयंप्रमाणत्वात् ॥ ५९ ॥

* किसी-किसी प्रतिमें 'तदेव भाषयति' नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

५९—क्योंकि भक्ति स्वयं प्रमाणरूप है, इसके लिये अन्य प्रमाणकी आवश्यकता नहीं है।

शान्तिरूपात्परमानन्दरूपाच्च ॥ ६० ॥

६०—भक्ति शान्तिरूपा और परमानन्दरूपा है।

लोकहानौ चिन्ता न कार्या निवेदितात्मलोकवेदत्वात्* ॥ ६१ ॥

६१—लोकहानिकी चिन्ता (भक्तको) नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वह (भक्त) अपने आपको और लौकिक, वैदिक (सब प्रकारके) कर्मोंको भगवान्‌के अर्पण कर चुका है।

न तदसिद्धौ† लोकव्यवहारो हेयः किन्तु फलत्यागस्तत्साधनं च कार्यमेव ॥ ६२ ॥

६२—(परन्तु) जबतक भक्तिमें सिद्धि न मिले तबतक लोकव्यवहारका त्याग नहीं करना

---

* पाठभेद 'लोकवेदशीलत्वात्'।

† पाठभेद 'तत्सिद्धौ' है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चाहिये, किन्तु फल त्याग कर (निष्कामभावसे) उस भक्तिका साधन करना चाहिये ।

स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्रं* न श्रवणीयम् ६३

६३—स्त्री, धन, नास्तिक और वैरीका चरित्र नहीं सुनना चाहिये ।

अभिमानदम्भादिकं त्याज्यम् ॥ ६४ ॥

६४—अभिमान, दम्भ आदिका त्याग करना चाहिये ।

तदर्पिताखिलाचारः सन् कामक्रोधाभिमानादिकं तस्मिन्नेव करणीयम् ॥ ६५ ॥

६५—सब आचार भगवान्‌के अर्पण कर चुकनेपर यदि काम, क्रोध, अभिमानादि हों तो उन्हें भी उस (भगवान्) के प्रति ही करना चाहिये ।

त्रिरूपभङ्गपूर्वकं नित्यदास्यनित्यकान्ताभजनात्मकं वा प्रेमैव कार्यम्, प्रेमैव कार्यम् ६६

* पाठभेद 'स्त्रीधननास्तिकचरित्रम्' ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६६—तीन (स्वामी, सेवक और सेवा) रूपोंको भङ्गकर नित्य दासभक्तिसे या नित्य कान्ताभक्तिसे प्रेम ही करना चाहिये, प्रेम ही करना चाहिये।

भक्ता एकान्तिनो मुख्याः ॥ ६७ ॥

६७—एकान्त (अनन्य) भक्त ही श्रेष्ठ हैं।

कण्ठावरोधरोमाञ्चाश्रुभिः परस्परं लपमानाः पावयन्ति कुलानि पृथिवीं च॥६८॥

६८—ऐसे अनन्य भक्त कण्ठावरोध, रोमाञ्च और अश्रुयुक्त नेत्रवाले होकर परस्पर सम्भाषण करते हुए अपने कुलोंको और पृथ्वीको पवित्र करते हैं।

तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मीकुर्वन्ति कर्माणि सच्छास्त्रीकुर्वन्ति शास्त्राणि ॥ ६९ ॥

६९—ऐसे भक्त तीर्थोंको सुतीर्थ, कर्मोंको सुकर्म और शास्त्रोंको सत् शास्त्र कर देते हैं।

तन्मयाः ॥ ७० ॥

७०—(क्योंकि) वे तन्मय हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मोदन्ते पितरो नृत्यन्ति देवताः सनाथा चेयं भूर्भवति ॥ ७१ ॥

७१—(ऐसे भक्तोंका आविर्भाव देखकर) पितरगण प्रमुदित होते हैं, देवता नाचने लगते हैं और यह पृथ्वी सनाथा हो जाती है ।

नास्ति तेषु जातिविद्यारूपकुलधन-क्रियादिभेदः ॥ ७२ ॥

७२—उनमें (भक्तोंमें) जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रियादिका भेद नहीं है ।

यतस्तदीयाः ॥ ७३ ॥

७३—क्योंकि (भक्त सब) उनके (भगवान्‌के) ही हैं ।

वादो नावलम्ब्यः ॥ ७४ ॥

७४—(भक्तको) वाद-विवाद नहीं करना चाहिये ।

बाहुल्यावकाशादनियतत्वाच्च ॥ ७५ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७५—क्योंकि (वाद-विवादमें) बाहुल्यका अवकाश है और वह अनियत है ।

भक्तिशास्त्राणि मननीयानि तदुद्बोधक-कर्माण्यपि करणीयानि ॥ ७६ ॥

७६—(प्रेमा भक्तिकी प्राप्तिके लिये) भक्ति-शास्त्रका मनन करते रहना चाहिये और ऐसे कर्म भी करने चाहिये जिनसे भक्तिकी वृद्धि हो ।

सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नेयम् ॥ ७७ ॥

७७—सुख, दुःख, इच्छा, लाभ आदिका (पूर्ण) त्याग हो जाय ऐसे कालकी बाट देखते हुए आधा क्षण भी (भजन बिना) व्यर्थ नहीं बिताना चाहिये ।

अहिंसासत्यशौचदयास्तिक्यादि-चारित्र्याणि परिपालनीयानि ॥ ७८ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७८–(प्रेमा भक्तिके साधकको) अहिंसा, सत्य, शौच, दया, आस्तिकता आदि आचरणीय सदाचारोंका भलीभाँति पालन करना चाहिये ।

सर्वदा सर्वभावेन निश्चिन्तितैर्भगवानेव भजनीयः ॥ ७९ ॥

७९–सब समय, सर्वभावसे निश्चिन्त होकर (केवल) भगवान्‌का ही भजन करना चाहिये ।

स कीर्त्यमानः शीघ्रमेवाविर्भवति अनुभावयति च भक्तान् ॥ ८० ॥

८०–वे भगवान् (प्रेमपूर्वक) कीर्तित होनेपर शीघ्र ही प्रकट होते हैं और भक्तोंको अपना अनुभव करा देते हैं ।

त्रिसत्यस्य भक्तिरेव गरीयसी भक्तिरेव गरीयसी ॥ ८१ ॥

८१–तीनों (कायिक, वाचिक, मानसिक) सत्योंमें (अथवा तीनों कालोंमें सत्य भगवान्‌की) भक्ति ही श्रेष्ठ है, भक्ति ही श्रेष्ठ है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुणमाहात्म्यासक्तिरूपासक्तिपूजासक्ति-स्मरणासक्तिदास्यासक्तिसख्यासक्तिकान्ता-सक्तिवात्सल्यासक्त्यात्मनिवेदनासक्ति-तन्मयतासक्तिपरमविरहासक्तिरूपा एक-धाप्येकादशधा भवति ॥ ८२ ॥

८२—यह प्रेमरूपा भक्ति एक होकर भी १ गुणमाहात्म्यासक्ति, २ रूपासक्ति, ३ पूजासक्ति, ४ स्मरणासक्ति, ५ दास्यासक्ति, ६ सख्यासक्ति, ७ कान्तासक्ति, ८ वात्सल्यासक्ति, ९ आत्म-निवेदनासक्ति, १० तन्मयतासक्ति और ११ परम-विरहासक्ति—इस प्रकारसे ग्यारह प्रकारकी होती है।

इत्येवं वदन्ति जनजल्पनिर्भया एकमताः कुमारव्यासशुकशाण्डिल्यगर्गविष्णुकौण्डिन्य-शेषोद्धवारुणिबलिहनुमद्विभीषणादयो भक्त्याचार्याः ॥ ८३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८३—कुमार (सनत्कुमारादि), वेदव्यास, शुकदेव, शाण्डिल्य, गर्ग, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष, उद्धव, आरुणि, बलि, हनूमान्, विभीषण आदि भक्तितत्त्वके आचार्यगण लोगोंकी निन्दा-स्तुतिका कुछ भी भय न कर (सब) एकमतसे ऐसा ही कहते हैं (कि भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है)।

य इदं नारदप्रोक्तं शिवानुशासनं विश्वसिति श्रद्धत्ते स प्रेष्ठं लभते स प्रेष्ठं लभत इति ॥ ८४ ॥

८४—जो इस नारदोक्त शिवानुशासनमें विश्वास और श्रद्धा करते हैं वे प्रियतमको पाते हैं, वे प्रियतमको पाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

-सू-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi